AJANTA - VOL. - VII ISSUE - I ISSN 2277 - 5730 (I.F.-5.2) JANUARY-MARCH - 2018

ISSN 2277 - 5730

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

AJANTA

VOLUME - VII ISSUE - I JANUARY - MARCH - 2018 AURANGABAD

Peer Reviewed Referred and UGC Listed Journal

IMPACT FACTOR / INDEXING
2017 – 5.2
www.sjifactor.com

+ EDITOR +

Assit. Prof. Vinay Shankarrao Hatole

M.Sc (Math's), M.B.A. (Mkt), M.B.A (H.R),
M.Drama (Acting), M.Drama (Prod & Dirt), M.Ed.

+ PUBLISHED BY +

Ajanta Prakashan
Aurangabad. (M.S.)

Assist Professor
Lal Bahadur Shastri Sr College
Partur Dist. Jalna (M.S.)

१२	प्रा. डॉ. विठ्ठल तुळशीरामजी वजीर	प्रबंधात्मक काव्य 'असाध्यवीणा' में व्यक्त अज्ञेयजी	४५-४८

'अजिंठा' या त्रैमासिकात प्रसिध्द झालेली मते मुख्य संपादक, संपादक मंडळ व सल्लागार मंडळास मान्य असतीलच असे नाही. या नियतकालिकात प्रसिध्द करण्यात आलेली लेखकाची मते ही त्याची वैयक्तिक मते आहेत.

तसेच शोधनिबंधाची जबाबदारी स्वतः लेखकावर राहील. हे नियतकालिक मालक मुद्रक प्रकाशक विनय शंकरराव हातोले यांनी अजिंठा कॉम्प्युटर अँण्ड प्रिंटर्स जयसिंगपूरा विद्यापीठ गेट औरंगाबाद येथे मुद्रित व प्रकाशित केले.

१२

प्रबंधात्मक काव्य 'असाध्यवीणा' में व्यक्त अज्ञेयजी

प्रा. डॉ. विठ्ठल तुळशीरामजी वजीर
शोधनिर्देशक तथा सहयोगी अधिव्याख्याता, लाल बहादूर शास्त्री महाविद्यालय, परतूर,
ता. परतूर जि. जालना (महाराष्ट्र).

हिन्दी कविता को सुनिश्चित ऊँचाई पर स्थापित कर देने में अज्ञेय का काव्य अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अज्ञेय का काव्य विविध चेतनाओं से भरा हुआ है। विषय की दृष्टी से उसमें अनेकरुपता पायी जाती है। उन्होंने प्रकृति - चित्रण, यांत्रिक सभ्यताओं के गुण - दोष, वैज्ञानिक उपलब्धियाँ, निजी प्रेरणाभूति आदि को अपने काव्य का विषय बनया है। हिन्दी साहित्य के अज्ञेय एक ऐसे साहित्यकार है, जिन्होंने अपनी प्रतिभा से कविता, कहानी, उपन्यास, अनुवाद, निबंध, यात्रा - वर्णन, पत्रकारिता में अपना विशिष्ट स्थान निर्माण किया है। हिन्दी भाषा को समृध्द एवं अर्थ - गर्भ बनाने में उनका योगदान सबसे अधिक है।

'असाध्यविणा' अज्ञेय की लम्बी कविता है, जिसमें प्रबंधात्मकता दृष्टिगत होती है। जपानी कथा 'Taming of the Harp' असाध्य वीणा की केंद्रीय कथा का आधार है। जिसका संक्षिप्त कथानक इस पकार है - किरी नामक एक वृक्ष से जादूगर ने एक वीणा बनाई। यह वृक्ष पवित्र माना जाता है। चीन के एक सम्राट ने इस वाद्य यंत्र को कई वादकों से बजाने का आग्रह किया। परंतु कोई भी उसमें सफल नहीं हुआ। अंततः वीणाकारों के राजकुमार पीवो को अपनी साधना के कारण इसे बजाने में सफलता प्राप्त हुई। इस रस्य को राजकुमार ने सम्राट के समक्ष व्यक्त करते हुए कहा कि दूसरे वादकों को यह विणा इसलिए साध्य नहीं हो सकी क्योंकि वे इसमें अपने अहं को प्रकट करना चाहते थे। जबकि मैंने अपने अहं को विस्मृत कर इस वीणा में सुप्त संगीत को जागृत किया। मुझे स्वयं यह बात ज्ञान नहीं हो सकी कि मैं वीणा हुं या वीणा मुझमें है। यह कथा प्रतीकात्मक है। जो लौकिक एवं अलौकिक स्तरों पर चरितार्थ होती है. 'लौकिक स्तर पर किरी वृक्ष समष्टि का प्रतिक है। अलौकिक स्तर पर वह ब्रम्ह है, महामौन है जिसमें संगीत सोता है, विराट है, जो आकाश से लेकर पाताल तक व्याप्त है। जो नाना ध्वनियाँ है। वीणा व्यक्ति के भौतिक अस्तित्व का प्रतीक है।

'असाध्य वीणा' में यह आख्यान है कि एक राजा के पास पुरानी वीणा थी। जो प्राचीन मंत्रपूत किरीटी वृक्ष से वज्रकीर्ति ने अत्यंत साधना पूर्वक, हठ साधना से गढी थी। परंतु दुर्भाग्य यह रहा कि वीणा के गढते ही उसकी मृत्यु हो गयी। इस वृक्ष के कानों में हिम-शिखर अपना रहस्य कहा करते थे, उसके कंधो पर बादल सोते थे, उसकी गज के शुंडों-सी डालें, हिमवर्षा से वन-यूथों का परित्राण किया करती थी। यह वृक्ष इतना विशाल था कि इसके कोटरों में भालू निवास करते थे। सिंह उसके पास आकर उसके वल्कल से कंधे खुजलाते थे। इसकी जडें पाताल लोक तक पहुँची थी। उस वृक्ष की गंध प्रवण शीतलता पर वासुकी नाग अपने फन टिकाकर सोता था। इस प्रकार की यह अदभुत वीणा को बजाने का कई वादकों ने प्रयास किया पर वे सफल नहीं हुए। अतः यह वीणा 'असाध्य वीणा' के नाम से विख्यात हो गयी। अंततः पियंवद नामक

साधक जिसे 'केश कम्बली' और 'गुफा-गेह' कहकर संबोधित किया गया है। इसे बजाने का प्रयास करता है। कविता का प्रारंभ - 'साध आज मेरे जीवन की पूरी होगी' राजा प्रियंवद के प्रति इस विश्वास के साथ हुआ है।

'आ गए पियंवद ! केशकंबली ! गुफा-गेह !

राजा ने आसन दिया। कहा:

"कृतकृत्य हुआ मैं तात ! पधारे आप"

भरोसा है अब मुझ को।"

इसे बजाने का अनेक कलाकारों ने प्रयत्न किया परंतु उनकी वादन कला, उनका दर्प चूर-चूर हो गया। 'सबकी विद्या हो गयी अकारथ'। में प्रासंगिकता लक्षित होती है। सम्प्रति, हमारी विद्या, हमारा ज्ञान, केवल भौतिकता तक सीमित हो गया है। हमारी विद्या 'विद्यावाचस्पति की उपाधि' तक पहुँची है; परंतु वह मानवमूल्य के प्रति उदासीन है। इस विद्या ने हमें आदर्शोन्मुख न करते हुए केवल धन प्राप्ति तक पहुँचाया है। यांत्रिक सभ्यता सर्वथा मानव जीवन का श्रेय और प्रेय नहीं हो सकती। प्रियंवद ने अपना कम्बल बिछाकर उस पर वीणा रखी। और पलकें मूंदकर उस वीणा को वंदन करते हुए स्पर्श किया। फिर उसको गोद में रखकर उसके तारों पर अपना मस्तक रख दिया यथार्थतः पियंवद वीणा पर मस्तक को टेककर सोया नहीं था वह तो अपने 'स्व' को उसमें लीन कर देना चाहता था। इसलिए वीणा पर मस्तक टेककर उसे अभिवादन करने लगा और साधक निर्माता की जीवनभार की साधना के प्रति समर्पित हुआ। उसने उस वृक्ष के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की जिसकी लकडी से यह वीणा निर्मित हुई थी। उसने वृक्ष को संबोधित करते हुए कहा कि यद्यपि यह वीणा मैंने गोद में रखी है परंतु -

'ओ तरु - तात ! सँभाल मुझे

तेरी गोदी में बैठा मोद - भरा बालक हूँ ।'

कहकर उस विराट के समक्ष अपने आप को लघु माना। वीणा के तारों को साधते ही वे झनझना उठे। और वहाँ उपस्थित सभी की इयत्ता अलग-अलग जाग गयी। वीणा फिर मूक हो गयी। परंतु उस कलाकार के प्रति साधुवाद व्यक्त करते हुए राजा सिंहासन से उतरे, रानी ने तो सतलडी हार कलाकार को अर्पित कर दिया और जनसमूह धन्य ! हे स्वरजित ! धन्य धन्य! कहने लगा। उसने राजा को अभिवादन करते हुए इतना ही कहा कि इसमें मेरा कुछ भी नहीं है मैं तो स्वयं शून्य में डूब गया था। वीणा का जो स्वर आपने सुना था वह मेरा नही था। वस्तुतः यह अपने अहं के विसर्जन की परिणति है। वज्रकीर्ति ने वीणा बनाते समय किती तरु के अर्थात समष्टि के सभी स्वर उसमें भर दिये थे। अतः उसे वही साध्य कर सकता है जो आत्मकेंद्रित दर्प से ऊपर उठकर समष्टि के सत्य से सीधा साक्षात्कार करता हो. कलाकार की यह उदात्तता होती है कि वह कला का निर्माण कर सृजन का आनंद प्राप्त करता है। परंतु उसमें दर्प नहीं होता। यहाँ भी प्रियंवद का दृष्टिकोण सही है कि जिस वृक्ष के काष्ठ से यह विणा निर्मित हुई है, जिस कलाकार ने इस वीणा का निर्माण किया वे महत्वपूर्ण है। मैंने तो केवल वीणा के तारों की सुप्त झंकार को छेडा था। 'यह कैसी विनम्रता है, कैसा समर्पण - एक कलाकार का - जो अपना सारा श्रेय उस महाशून्य को देता है जिसे हम ब्रम्ह कहते हैं। और जो शब्दहीन सब में गाता है। कविता, यहाँ तक आते आते अपने आध्यात्मिक शिखर का संस्पर्श कर लेती है।

'स्व' के विसर्जन से ही साध्य प्राप्य है। कृष्ण ने गीता में कहा था कि - 'अहंत्वा सर्वमापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः'
तात्पर्य यह है कि ईश्वर की प्राप्ति तभी हो सकती है जब अहं का त्याग किया जाय इसलिए प्रियंवद वृक्ष से कहते हैं कि -

'मैं नहीं, नहीं ! मैं कहीं नहीं !
ओ रे तरु ! ओ वन !
ओ स्वर - सम्भार'
नादमय संस्कृति !
ओ रस प्लावन !
मुझे क्षमा कर -
भूल अकिंचनता को मेरी !'

संगीत में अध्यात्म है इसी कारण वीणा के स्वर सुनकर राजा के सांसारिक ताप शांत हो जाते है। ईर्षा,
महत्वाकांक्षा, द्वेष, चाटुता आदि अहंकारजन्य विकार, पुराने लगुडे - से झर गये एवं अहंकार का राजमुकुट सहसा हलका हो
गया, मानो शिरीष का फूल हो। और -

'निखर आया था जीवन - कांचन
धर्म भाव से जिसे निछावर वह कर देगा।'

वहाँ उपस्थित सभी की इयत्ता अलग - अलग जागी थी। अज्ञेय जी के मतानुसार तुलसीदास के - 'जाकी रही
भावना जैसी। प्रभु मूरत देख तहँ तैसी' इस कथन के धरातल पर वीणा के संगीत में किसी को प्रभुओं का कृपा वाक्य, तो
किसी को आतंक मुक्ति का आश्वासन, तो किसी को भरी तिजोरी में सोने की खनक, तो किसी को बटुली में बहुत दिनों के
बाद अन्न की सौंधी महक की अनुभूति हुई, तो किसी को यह अनुभव हुआ कि यह संगीत नयी नवेली वधु की सहमी - सी
पायल ध्वनि है। इस संगीत में शिशुओं की किलकारी या मुक्त आकाश में उडती चिडियों की चहक का आभास हुआ।
किसी भक्त को मंदिर की ताल युक्त घण्टा ध्वनि का निनाद, तो किसी श्रमजीवी को लोहे पर सधे हतोडे की सम चोटों - सा
अनुभव हुआ। वीणा का संगीत तो एक था परंतु उसकी अनुभूति में विविधता थी। रानी ने उस संगीत को सुना तो उसे यह
प्रतीत हुआ की मणि-माणिक, कंठहार, पट-वस्त्र, मेखला, किंकिणि आदि सब अंधकार के कण है। भौतिकता, ऐश्वर्य,
वैभव सत्य नहीं है संगीत जिसमें से एक आलोक बिखरता है।

वस्तुतः 'असाध्य वीणा' कवि के जीवन की 'साध्य वीणा' है। इसमें कवि ने महामौन को शब्दबध्द करने का अनुपम
कार्य किया है। डॉ. कैलाश मिश्र के अनुसार - 'यह असाध्य वीणा अज्ञेय की रहस्यमय साध्य का साधना, साध्य और
उपलब्धि तीनों है।'

लम्बी कविताओं के अंतर्गत 'असाध्य वीणा' के महत्व का रेखांकन करते हुए रामदरश मिश्र ने लिखा है कि 'अज्ञेय
की 'असाध्य वीणा' विश्व की उत्कृष्टतम कविताओं में एक है। हिंदी में उसकी समता निराला की 'राम की शक्तिपूजा', पंत
की 'परिवर्तन', माखनलाल चतुर्वेदी की 'कैदी और कोकिल' तथा मुक्तिबोध की 'अंधेरे में' जैसी कुछ कविताओं से की जा
सकी है। वस्तुतः समुचित प्रयोगवादी कही जानेवाली कविता की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है।'

Assist Professor

इस कविता में प्रियंवद विशाल किरीटी तरु के प्रति आत्मीयता व्यक्त करता है। क्योंकि प्रकृति की उपादेयता निःसंदिग्ध है। उसी से वीणा निर्मित हुई है। इसलिए यहाँ कवि प्रकृति के विविध परिदृश्य चित्रित करता है - वर्षा, वसंत आदि ऋतुएँ वृक्ष का संवर्धन करती है। विवेच्य कविता का शिल्प पक्ष भी सशक्त है। विशेष रुप से यह बिंब - प्रतीकात्मक काव्य सृजन है. 'दुर पहाडों से काले मेघों की बाढ' एवं 'धरती के घावों को चुपचाप सहलाते हिमतुषार के फाहों' में प्रकृति के बिंब उभरे है। तरु का बिंब - सत सहस्त्र पल्लवन - पतझरों ने जिस का नित रुप सँवारा' । के माध्यम से चित्रित है। कविता में माँ और उसके नन्हें बेटे का वत्सल बिंब संगीतकार एवं वीणा के वत्सल भाव के रुप में रेखांकित है -

'संगीतकार
वीणा को धीरे से नीचे रख, ढँक - मानो
गोदी में सोए शिशु को पालने डाल कर मुग्धा माँ
हट जाय, दीठ से दुलराती -'

ऐसे अनेक बिंब काव्य के कथ्य को उभारते है। डॉ रामदरश मिश्र के शब्दों में - 'इस कविता में बिंबो की भूमिका बडी है। भाषा भी प्राय: बिंबात्मक ही है। संवेदना के अनुसार भाषा अपनी शब्द योजना में, वाक्य विन्यास में अलग हो उठती है। कहा जा चुका है कि एक ही बडे, बिंब में कोमल - कठोर, सुखात्मक, दुखात्मक, स्वरमूलक, गन्धमूलक, रुपमूलक, स्पर्शमूलक - अनेक बिंब आपस में संग्रथित होकर आए है।

'असाध्य वीणा' पर बौध्द दर्शन का भी प्रभाव लक्षित होता है। इसीलिए अज्ञेय जी ने महाशून्य की धारणा व्यक्त की है। कविता के कथ्य एवं आशय में रहस्यवादी वैचारिकता है। डॉ. कृष्ण भावुक लिखते है कि - 'अज्ञेय जी ने यह कविता लिखकर यह सिध्द कर दिया है कि वह भी रहस्यवाद की 'असाध्य वीणा' को साध सकते है, उसके तारों में प्राण - स्वरों के स्पंदन झंकृत करने की क्षमता रखते है और वीणा वही धरकर अपने पुराने गुफा - गेह की ओर भी पलट सकते है।'

निःसंदेह घनता एवं गहनता की वैचारिक पृष्ठभूमि पर आधारित आलोच्य कविता का कथ्य संक्षिप्त होते हुए भी कला के प्रति पूर्णत: समर्पित है। इसमें अहं का विसर्जन है। व्यक्तित्व के विकास का अंतिम चरण समर्पण ही होता है। कवि ने इसी तथ्य को उजागर किया है कि स्वयं को निःशेष रुप में देने पर ही सर्वव्यापक सत्य की स्थापना होती है। व्यक्ति का व्यक्तित्व तभी हितकारी एवं शुभकारी होता है जब वह समवाय के प्रति पूर्णत: अर्पित - समर्पित किया जाता है। वास्तव में प्रियंवद जैसा संपन्न व्यक्तित्व ही अहं का विलय कर सकता है। अपनी काव्य - कथा के नायक प्रियंवद द्वारा समर्पन की पराकाष्ठा ही असाध्य वीणा के साधक अज्ञेय की 'असाध्य वीणा' का साध्य रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सुचि

1. हिंदी कविता आधुनिक आयाम - डॉ. रामदरश मिश्र
2. अक्षरपर्व (जून 2010) - एकांत श्रीवास्तव
3. हिंदी कविता तीन दशक - डॉ कैलाश मिश्र
4. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता की दिशाएँ - रामदरश मिश्र
5. हिंदी कविता आधुनिक आयाम - डॉ रामदरश मिश्र
6. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता - डॉ नरसिंह प्रसाद दुबे